पुस्तक समीक्षा

दादी ने की बुनाई

तेजी ग्रोवर

जब भी लोग अपनी सुविधा के लिए किसी पुस्तक को 'बाल साहित्य' की श्रेणी में रखते हैं हम दो चीज़ों को नज़रअन्दाज़ कर रहे होते हैं। पहली तो यह कि वह पुस्तक अगर बच्चों के लिए साहित्य है, तो निश्चित ही वह बड़ों के लिए भी 'साहित्य' है, यानी इस संसार में मनुष्य के हिस्से में आई सौन्दर्य-दृष्टि, उसका सम्पूर्ण भाव-जगत, सुख और दुःख, प्रेम और ईर्ष्या, अभाव और वैभव, सभी उस साहित्य में दिखते हैं, महसूस होते हैं। वह 'पुलक' और उल्लास जो हमें बच्चों की दुनिया में सहज ही हासिल हो जाते हैं, बड़े होने की प्रक्रिया में हममें से कुछ ही लोग उन्हें संजोकर रखने की सामर्थ्य जुटा पाते हैं। इसलिए जिसे हम सचमुच में 'बाल-साहित्य' कह सकते हैं, वह हम बड़ों को खुशी देने का बहुमूल्य स्रोत है, और अपने और अपने बच्चों के लिए पुस्तकों का चयन करते समय इस बात को हमें हरगिज़ नहीं भूलना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि 'बाल-सहित्य'

चित्रांकनः ओरा एटन

साहित्य के इतिहास में अभी अपेक्षाकृत नई विधा है। विश्व-भर की लोककथाएं, मिथक, महाकाव्य, दुनिया-भर में गाई जाने वाली लोरियां, टप्पे, दोहे, चौपाइयां -- ये सब पहले बड़ों के साथ-साथ बच्चों के लिए भी 'साहित्य' थीं, सिरजने की प्रेरणा देती थीं, ढाढ़स बंधाती थीं, जीने और मरने की शक्ति देती थीं। इस सब के बीच सृष्टि और विनाश के मिथक जो जातीय और सामुदायिक जीवन में रचे-बसे हैं, उनका भी सहारा मनुष्य को कम नहीं था। वे घनघोर नैराश्य से उसे बचा ले जाते थे -- जो अस्तित्व में है, वह नश्वर है, कभी प्रकृति तो कभी मनुष्य की अपनी प्रकृति ही उसे नष्ट कर देती है -- लोक की सहज बुद्धि में ये आम बातें थीं। वे कृतियां जो इस सहज-बुद्धि से उत्प्रेरित हैं उन्हें यदि हम देखें तो निश्चत ही कुछ अद्‌भुत किताबें हमारे सामने आएंगी। और **दादी ने की बुनाई** उन बहुमूल्य पुस्तकों में से एक है।

मूल रूप से हिब्रू भाषा में लिखी गई यह कहानी उस दादी की है जो अपने झोले में एक छड़ी, दो सलाइयां और ऊन का एक गोला लिए शहर चली आती है। रहने की जगह नहीं है और उसके पांव चल चलकर सूज जाते हैं, और इसी थकान-भरी सूजन से एक सृष्टि की शुरुआत कर लेती है दादी। पहले वह अपने लिए चप्पलें बुनती है, फिर उन्हें रखने के लिए टाट, बाद अपने रहने के लिए एक पलंग और बिस्तर। करते-करते ऊन का घर, पर्दे, चाय की तीन प्यालियां और आखिर अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए ऊन का एक पोता और एक पोती। ऊन के बुने इन विचित्र रूप से चतुर बच्चों को स्कूल दाखिला देने से मना कर देता है। नगर-पालिका भी चकित है - भला कौन ऊन के बुने हुए बच्चों को स्कूल में पढ़ने की अनुमति देगा! लेकिन दादी ने बच्चों के लिए न केवल फूल, झूले और बस्ते ही बुने हैं, बल्कि उन्हें सुलाने के लिए रात का अंधेरा और मधुर सुकोमल स्वप्न भी बुने हैं, वह कैसे हार जाएगी। कहानी के अन्त में दादी भीषण गुस्से में एक-एक कर अपनी रची हुई सृष्टि पूरी की पूरी उधेड़ डालती है। लेकिन

वह इसी संसार में कोई और जगह ढूंढेगी, नया घर बसाएगी, नए बच्चे बुनेगी और समय के अन्त तक बुनती चली जाएगी।

किसी भी कसौटी से यह किताब उत्कृष्ट साहित्य की श्रेणी में ही रखी जानी चाहिए। इस किताब का अंग्रेज़ी अनुवाद GRANNY KNITS एकदम त्रुटि-रहित छन्द में अनूदित है, जिसमें भर्ती के कोई शब्द नहीं हैं। ऐसा नहीं लगता कि तुक मिलाने के लिए मूल हिब्रू से कोई ज़्यादा छेड़-छाड़ की गई होगी। हो सकता है कि अंग्रेज़ी अनुवादक ने इसे अंग्रेज़ी में मूल रचना की ही प्रेरणा से पुनः रचा हो, क्योंकि अंग्रेज़ी को पढ़ने से मूल जैसा ही आनन्द प्राप्त होता है। हिन्दी अनुवाद जाने-माने हिन्दी कवि प्रयाग शुक्ल ने किया है। बच्चों के लिए उनकी लिखी हुई कई अद्भुत कविताएं हैं जिन्हें वाकई बड़े भी भूल नहीं पाते। लेकिन अगर उन्होंने इस कहानी का अनुवाद छंद में न किया होता, जो कि अंग्रेज़ी से करना लगभग असम्भव जान पड़ता है, तो शायद बेहतर होता। यह कृति अच्छे, सधे हुए गद्य में भी उतनी ही अच्छी लगती, जितनी कि वह अंग्रेज़ी में अपने छंद-बद्ध रूप में लगती है। इसे समीक्षक का आग्रह कह लीजिए कि हो सके तो अंग्रेज़ी और हिन्दी दोनों ही अनुवाद ज़रूर पढ़िए ताकि आपको मूल रचना का पूरा मज़ा मिल सके। यह मानकर कि आप यह करने की कोशिश करेंगे, अब हम इस विचित्र कहानी में प्रविष्ट होते हैं।

यह कहानी कई मायनों में विशिष्ट है। इसे पढ़ते हुए सृष्टि के सृजन के कई मिथक हमें एक साथ स्मरण हो आते हैं। सृष्टि की रचना से पहले क्या था जिससे यह सब रचा गया है -- शब्द था, अन्धकार था, नाभि-कमल था, जल था, बड़ा-सा कोई अंडा था; या फिर थकान थी, ऊब थी, अकेलापन था? दादी के संसार की रचना तब होती है जब उसे अपने थके हुए पैरों के लिए चप्पलों की ज़रूरत महसूस होती है। हम अकेले हैं, थके हुए हैं, इसलिए हम घर-संसार की रचना भी करते

हैं, सो दादी भी करती है। वह घर संसार ऊन से बुना गया है, और इसलिए वह और भी अर्थपूर्ण है क्योंकि वह हमें कला-कर्म की अनुभूति भी कराता है, मानो हम शब्दों की सामग्री से ही संसार की रचना कर रहे हों। यह ऊन का बना हुआ घर विचित्र व्यंजना पैदा करता है -- एक बेघर बूढ़े व्यक्ति की कल्पनाशीलता और उसका जीवट। अपना मन लगाने के लिए यों भी घरेलू महिलाएं (और कुछ घरेलू पुरुष भी) कढ़ाई-बुनाई की विविध गतिविधियां करती रहती हैं। कुछ पढ़-लिख गए लोगों को यह काम हास्यास्पद जान पड़ता है, लेकिन यह काम पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही कला की और सौन्दर्य-दृष्टि की ऐसी मिसाल है, जिस पर ज़रूर कुछ अलग से सोचने की ज़रूरत है। 'टाइम-पास' (जिसकी हांक मूंगफली बेचने वाले भी लगाते हैं) दरअसल एकदम निरापद ढंग से समय गुज़ारने की एक ऐसी युक्ति है, जिससे दुनिया में कोई बिगाड़ पैदा नहीं होता। पुरानी चीज़ों को नए उपयोग में लाने की धुन में स्वेटरों को नए सिरे से फिर बुन लिया जाता है। दादी भी इसी तरह अपनी दुनिया की रचना करती है -- चप्पलों से शुरुआत करके, बगीचे के फूल, पलंग, लैम्प-शेड, चाय, पोता और पोती, रात का अंधेरा और फिर मकड़ी के जालों से भी महीन और सुकोमल सपनों को भी दादी ही बुनती है।

पोता और पोती ऊन के हैं, लेकिन उनमें सुख-दुख और शैतानी वैसी ही है, जैसी बच्चों में। वे कुछ-कुछ उदास भी हैं -- वे प्लास्टिक के बने हुए गुड्डे नहीं हैं जो केवल मुस्कराते हैं। ऊन का तत्व ही उनकी नश्वरता को भी इंगित करता है

और हाथापाई में ऊन की बनी लड़की अपने भाई को उधेड़ डालती है। दादी उधड़े हुए बच्चे का पिछवाड़ा फिर से बुन देती है, एक मिथकीय कर्म जो हमारे रोज़मर्रा के जीवन में बराबर झलकता है।

कहानी में मोड़ तब आता है जब लाख मनाने के बाद भी स्कूल के शिक्षक ऊनी बच्चों को दाखिला नहीं देते। अभी तक सृष्टि-सृजन के मिथकीय धरातल पर चलने वाला कथानक अचानक स्कूली शिक्षा और राजनीति पर ज़ोरदार कटाक्ष करने लगता है। कोई स्कूल भला ऊन के बुने बच्चों को कैसे ले सकता है? (अब आप स्वयं 'ऊनी' विशेषण के जो भी अर्थ गुन सकते हैं, वे आपको इस कथा की गहराई में लिए चले जाएंगे।) नगर-पालिका के सदस्यों को भी ऊन के बुने बच्चों का स्कूल जाना गवारा नहीं है। दादी उन बेकार लोगों तक पहुंचने के लिए एक टेढ़ी-मेढ़ी ऊनी कार-बुनती है, फिर राष्ट्रपति तक पहुंचने के लिए ऊनी हेलिकॉप्टर। यानी सर्जनात्मक ऊर्जा से सराबोर कोई एक मिथक, कोई एक अद्भुत कथानक, आधुनिक जीवन के दुःस्वप्न में आकर फंस गया है। उस से बाहर निकलने के लिए उसे एक बार फिर अपनी रची-रचाई दुनिया को उधेड़ देना होगा। ऊन का कुछ नहीं बिगड़ेगा, न सलाइयों का, न दादी के झोले का। उन सपनों का कुछ नहीं बिगड़ेगा जिन्हें फिर से बुनने का हौंसला दादी में अन्त तक रहेगा। वह पोता और पोती को बुनने से पहले भी दादी थी, भले ही उसका कोई पुत्र न हो। उन्हें उधेड़ देने के बाद भी वह गुस्सैल, स्वाभिमानी दादी फिर से एक नई दुनिया को बुनेगी जिसमें उसके लाडले बच्चे अपने सभी सपनों को जी सकते हैं, भले ही वे ऊन के बुने हुए क्यों न हों।

किताब के अन्त में बड़ी-बड़ी इमारतों के सामने से शहर को छोड़ी हुई दादी सूनी सड़क पर चल रही है। उसके हाथ में उसका झोला और छड़ी है। वह फन्दा-फन्दा कर अपनी कलाकृति के हर अंश को उधेड़ चुकी है। 'ए दिल मुझे ऐसी

जगह ले चल' जैसा कोई अमिट और अदम्य भाव उसके मन में उमग रहा है। अब हम भी दादी के साथ कोई सपना बुन सकते हैं, ऐसा सपना जिसमें हर बच्चा अपने विशिष्ट गुणों के अनुकूल माहौल में बड़ा हो सके... और जिसमें हममें से कोई भी अपने अकेलेपन और थकान को नैराश्य में डूबने नहीं देगा।

इस तरह यह किताब हमारे मन के कई तार अनजाने में ही छेड़ देती है, हालांकि कहने को यह 'बाल-साहित्य' है।

इस किताब में बने काले-सफेद चित्रों में हर रेशा और फंदा अपनी कहानी साफ-साफ कहता है। स्कूल के शिक्षक जो बुने हुए नहीं हैं, बुने हुए पोते के सामने एकदम स्थूल और फिसड्डी जान पड़ते हैं... शायद उनमें ऊन के तत्व की कमी है। उन्हें भी कोई ऊनी ख्वाब देखने की ज़रूरत है। फिलहाल इस किताब के चित्र भी किसी सुखद स्वप्न से कम नहीं हैं - हमारी उस दुनिया में जिसके कई हिस्सों में 'दादी' और 'बुनाई' की आत्मीय छवियां तक मिटती चली जा रही हैं।

तेजी ग्रोवर: कवि, कथाकार एवं अनुवादक। बाल-साहित्य एवं शिक्षा में गहरी रुचि। पिछले कुछ वर्षों से चित्रकला भी कर रही हैं।

सभी चित्र समीक्षित पुस्तक से लिए गए हैं।

पुस्तक: दादी ने की बुनाई
लेखक: उरी ओरलोव
मूल भाषा: हिब्रू
हिन्दी अनुवाद: प्रयाग शुक्ल
चित्रांकन: ओरा एटन
प्रकाशक: नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, दिल्ली।
2001 संस्करण।
मूल्य: 16 रुपए।